ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

वेदों का वर्तमान समय में महत्व

चंद्रपाल जांदू

सहायक आचार्य, इतिहास, डॉ. भीमराव अंबेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

सार

वेद, प्राचीन भारत के पवित्र साहित्य हैं जो हिन्दुओं के प्राचीनतम और आधारभूत धर्मग्रन्थ भी हैं । वेद, विश्व के सबसे प्राचीन साहित्य भी हैं। भारतीय संस्कृति में वेद सनातन वर्णाश्रम धर्म के, मूल और सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं।

'वेद' शब्द संस्कृत भाषा के विद् ज्ञाने धातु से बना है। इस तरह वेद का शाब्दिक अर्थ 'ज्ञान' है। इसी धातु से 'विदित' (जाना हुआ), 'विद्या' (ज्ञान), 'विद्वान' (ज्ञानी) जैसे शब्द आए हैं।

आज 'चतुर्वेद' के रूप में ज्ञात इन ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है -

- **ऋग्वेद** - सबसे प्राचीन तथा प्रथम वेद जिसमें मन्त्रों की संख्या 10527 है। ऐसा भी माना जाता है कि इस वेद में सभी मंत्रों के अक्षरों की संख्या 432000 है। इसका मूल विषय ज्ञान है। विभिन्न देवताओं का वर्णन है तथा ईश्वर की स्तुति आदि।
- **यजुर्वेद** - इसमें कार्य (क्रिया) व यज्ञ (समर्पण) की प्रक्रिया के लिये 1975 गद्यात्मक मन्त्र हैं।
- **सामवेद** - इस वेद का प्रमुख विषय उपासना है। संगीत में गाने के लिये 1875 संगीतमय मंत्र।
- **अथर्ववेद** - इसमें गुण, धर्म, आरोग्य, एवं यज्ञ के लिये 5977 कवितामयी मन्त्र हैं।

वेदों को अपौरुषेय (जिसे कोई व्यक्ति न कर सकता हो, यानि ईश्वर कृत) माना जाता है। यह ज्ञान विराटपुरुष से वा कारणब्रह्म से श्रुति परम्परा के माध्यम से सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी ने प्राप्त किया माना जाता है। यह भी मान्यता है कि परमात्मा ने सबसे पहले चार महर्षियों जिनके अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नाम थे के आत्माओं में क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का ज्ञान दिया, उन महर्षियों ने फिर यह ज्ञान ब्रह्मा को दिया। इन्हें श्रुति भी कहते हैं जिसका अर्थ है 'सुना हुआ ज्ञान'। अन्य आर्य ग्रंथों को स्मृति कहते हैं, यानि वेदज्ञ मनुष्यों की वेदानुगत बुद्धि या स्मृति पर आधारित ग्रन्थ। वेद मंत्रों की व्याख्या करने के लिए अनेक ग्रंथों जैसे ब्राह्मण-ग्रन्थ, आरण्यक और उपनिषद की रचना की गई। इनमे प्रयुक्त भाषा वैदिक संस्कृत कहलाती है जो लौकिक संस्कृत से कुछ अलग है। ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिन्द-आर्य जाति के बारे में वेदों को एक अच्छा सन्दर्भ श्रोत माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्व बना हुआ है।

वेदों को समझना प्राचीन काल में भारतीय और बाद में विश्व भर में एक वार्ता का विषय रहा है। इसको पढ़ाने के लिए छः अंगों- शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष के अध्ययन और उपांगों जिनमें छः शास्त्र- पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य, और वेदांत व दस उपनिषद्- ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, मांडुक्य, ऐतरेय, तैतिरेय, छान्दोग्य और बृहदारण्यक आते हैं। प्राचीन समय में इनको पढ़ने के बाद वेदों को पढ़ा जाता था। प्राचीन काल के, वशिष्ठ, शक्ति, पराशर, वेदव्यास, जैमिनी, याज्ञवल्क्य, कात्यायन इत्यादि ऋषियों को वेदों के अच्छे ज्ञाता माना जाता है। मध्यकाल में रचित व्याख्याओं में सायण का रचा चतुर्वेदभाष्य "माधवीय वेदार्थदीपिका" बहुत मान्य है। यूरोप के विद्वानों का वेदों के बारे में मत हिन्द-आर्य जाति के इतिहास की जिज्ञासा से प्रेरित रही है। अतः वे इसमें लोगों, जगहों, पहाड़ों, नदियों के नाम

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

ढूँढते रहते हैं - लेकिन ये भारतीय परंपरा और गुरुओं की शिक्षाओं से मेल नहीं खाता। अठारहवीं सदी उपरांत यूरोपियनों के वेदों और उपनिषदों में रूचि आने के बाद भी इनके अर्थों पर विद्वानों में असहमति बनी रही है। वेदों में अनेक वैज्ञानिक विश्लेषण प्राप्त होते हैं।

परिचय

वेद सबसे प्राचीन पवित्र ग्रंथों में से हैं। संहिता की तारीख लगभग 1700-1100 ईसा पूर्व, और "वेदांग" ग्रंथों के साथ-साथ संहिताओं की प्रतिदेयता कुछ विद्वान वैदिक काल की अवधि 1500-600 ईसा पूर्व मानते हैं तो कुछ इससे भी अधिक प्राचीन मानते हैं। जिसके परिणामस्वरूप एक वैदिक अवधि होती है, जो 1000 ईसा पूर्व से लेकर 200 ई.पूर्व तक है। कुछ विद्वान इन्हे ताम्र पाषाण काल (4000 ईसा पूर्व) का मनते हैं। वेदों के बारे में यह मान्यता भी प्रचलित है कि वेद सृष्टि के आरंभ से हैं और परमात्मा द्वारा मानव मात्र के कल्याण के लिए दिए गए हैं। वेदों में किसी भी मत, पंथ या सम्प्रदाय का उल्लेख न होना यह दर्शाता है कि वेद विश्व में सर्वाधिक प्राचीनतम साहित्य है। वेदों की प्रकृति विज्ञानवादी होने के कारण पश्चिमी जगत में इनका डंका बज रहा है। वैदिक काल, वेद ग्रंथों की रचना के बाद ही अपने चरम पर पहुंचता है, पूरे उत्तरी भारत में विभिन्न शाखाओं की स्थापना के साथ, जो कि ब्राह्मण ग्रंथों के अर्थों के साथ मंत्र संहिताओं को उनके अर्थ की चर्चा करता है, बुद्ध और पाणिनी के काल में भी वेदों का बहुत अध्ययन-अध्यापन का प्रचार था यह भी प्रमाणित है। माइकल विटजेल भी एक समय अवधि देता है 1500 से 500-400 ईसा पूर्व, माइकल विटजेल ने 1400 ईसा पूर्व माना है, उन्होंने विशेष संदर्भ में ऋग्वेद की अवधि के लिए इंडो-आर्यन समकालीन का एकमात्र शिलालेख दिया था। उन्होंने 150 ईसा पूर्व (पतंजलि) को सभी वैदिक संस्कृत साहित्य के लिए एक टर्मिनस एंटी क्वीन के रूप में, और 1200 ईसा पूर्व (प्रारंभिक आयरन आयु) अथर्ववेद के लिए टर्मिनस पोस्ट क्वीन के रूप में दिया। मैक्समूलर ऋग्वेद का रचनाकाल 1200 ईसा पूर्व से 200 ईसा पूर्व के काल के मध्य मानता है। दयानन्द सरस्वती चारों वेदों का काल 1960852976 वर्ष हो चुके हैं यह (1876 ईसवी में) मानते है।[1]

वैदिक काल में ग्रंथों का संचरण मौखिक परंपरा द्वारा किया गया था, विस्तृत नैमनिक तकनीकों की सहायता से परिशुद्धता से संरक्षित किया गया था। मौर्य काल (322-185 ई० पू०) में बौद्ध धर्म (600 ई० पू०) के उदय के बाद वैदिक समय के बाद साहित्यिक परंपरा का पता लगाया जा सकता है। इसी काल में गृहसूत्र, धर्मसूत्र और वेदांगों की रचना हुई, ऐसा विद्वानों का मत है। इसी काल में संस्कृत व्याकरण पर पाणिनी ने 'अष्टाध्यायी' नामक ग्रंथ लिखा। अन्य दो व्याकरणाचार्य कात्यायन और पतञ्जलि उत्तर मौर्य काल में हुए। चंद्रगुप्त मौर्य के प्रधानमन्त्री चाणक्य ने अर्थशास्त्र नामक ग्रंथ लिखा। शायद 1 शताब्दी ईसा पूर्व के यजुर्वेद के कन्वा पाठ में सबसे पहले; हालांकि संचरण की मौखिक परंपरा सक्रिय रही। माइकल विटजेल ने 1 सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व में लिखित वैदिक ग्रंथों की संभावना का सुझाव दिया। कुछ विद्वान जैसे जैक गूडी कहते हैं कि "वेद एक मौखिक समाज के उत्पाद नहीं हैं", इस दृष्टिकोण को ग्रीक, सर्बिया और अन्य संस्कृतियों जैसे विभिन्न मौखिक समाजों से साहित्य के संचरित संस्करणों में विसंगतियों की तुलना करके इस दृष्टिकोण का आधार रखते हुए, उस पर ध्यान देते हुए वैदिक साहित्य बहुत सुसंगत और विशाल है जिसे लिखे बिना, पीढ़ियों में मौखिक रूप से बना दिया गया था। हालांकि जैक गूडी कहते हैं, वैदिक ग्रंथों कि एक लिखित और मौखिक परंपरा दोनों में शामिल होने की संभावना है, इसे "साक्षरता समाज के समानांतर उत्पाद" कहते हैं।

वैदिक काल में पुस्तकों को ताड़ के पेड़ के पत्तों पर लिखा जाता था। पांडुलिपि सामग्री (बर्च की छाल या ताड़ के पत्तों) की तात्कालिक प्रकृति के कारण, जीवित पांडुलिपियां शायद ही कुछ सौ वर्षों की उम्र को पार करती हैं। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय का 14 वीं शताब्दी से ऋग्वेद पांडुलिपि है; हालांकि, नेपाल में कई पुरानी वेद पांडुलिपियां हैं जो 11 वीं शताब्दी के बाद से हैं।

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

वेद, वैदिक अनुष्ठान और उसके सहायक विज्ञान वेदांग कहलाते थे, ये वेदांग प्राचीन विश्वविद्यालयों जैसे तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशिला में पाठ्यक्रम का हिस्सा थे।

प्राचीन काल में माना जाता है कि ब्रह्मा , विष्णु , महेश (शिव), ने ही सारे संसार का संचालन होता है और सारे देवता उसमें सहायक होते हैं। भगवाव शिव ने सात ऋषियों को वेद ज्ञान दिया। इसका उल्लेख गीता में हुआ है। ऐतिहासिक रूप से ब्रह्मा, उनके मरीचि, अत्रि आदि सात और पौत्र कश्यप और अन्य यथा जैमिनी, पतंजलि, मनु, वात्स्यायन, कपिल, कणाद आदि मुनियों को वेदों का अच्छा ज्ञान था। व्यास ऋषि ने गीता में कई बार वेदों (श्रुति ग्रंथों) का ज़िक्र किया है। अध्याय 2 में कृष्ण, अर्जुन से ये कहते हैं कि वेदों की अलंकारमयी भाषा के बदले उनके वचन आसान लगेंगे।

मध्यकाल में सायणाचार्य को वेदों का प्रसिद्ध भाष्यकार मानते हैं - लेकिन साथ ही यह भी मानते हैं कि उन्होंने ही प्रथम बार वेदों के भाष्य या अनुवाद में देवी-देवता, इतिहास और कथाओं का उल्लेख किया जिसको आधार मानकार महीधर और अन्य भाष्यकारों ने ऐसी व्याख्या की। महीधर और उव्वट इसी श्रेणी के भाष्यकार थे।

आधुनिक काल में राजा राममोहन राय का ब्रह्म समाज और दयानन्द सरस्वती का आर्य समाज लगभग एक ही समय (1800-1900 ईसवी) में वेदों के सबसे बड़े प्रचारक बने। दयानन्द सरस्वती ने यजुर्वेद और ऋग्वेद का लगभग सातवें मंडल के कुछ भाग तक भाष्य किया। सामवेद और अथर्ववेद का भाष्य पं० हरिशरण सिद्धान्तलंकार ने किया है। वैदिक संहिताओं के अनुवाद में रमेशचंद्र दत्त बंगाल से, रामगोविन्द त्रिवेदी एवं जयदेव वेदालंकार के हिन्दी में एवं श्रीधर पाठक का मराठी में कार्य भी लोगों को वेदों के बारे में जानकारी प्रदान करता रहा है। इसके बाद गायत्री तपोभूमि के श्रीराम शर्मा आचार्य ने भी वेदों के भाष्य प्रकाशित किये हैं - इनके भाष्य सायणाधारित हैं। अन्य भी वेदों के अनेक भाष्यकार हैं।[2]

वेदों का प्रकाशन शंकर पाण्डुरंग ने सायण भाष्य के अलावा अथर्ववेद का चार जिल्दों में प्रकाशन किया। लोकमान्य तिलक ने ओरायन और द आर्कटिक होम इन वेदाज़ नामक दो ग्रंथ वैदिक साहित्य की समीक्षा के रूप में लिखे। बालकृष्ण दीक्षित ने सन् 1877 ई० में कोलकाता से सामवेद पर अपने ज्ञान का प्रकाशन कराया। श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने सातारा में चारों वेदों की संहिता का श्रमपूर्वक प्रकाशन कराया। तिलक विद्यापीठ, पुणे से पाँच जिल्दों में प्रकाशित ऋग्वेद के सायण भाष्य के प्रकाशन को भी प्रामाणिक माना जाता है। सत्रहवीं सदी में मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब के भाई दारा शूकोह ने कुछ उपनिषदों का फ़ारसी में अनुवाद किया (सिर्रे ए अकबर, سرّ اکبر महान रहस्य) जो पहले फ्रांसिसी और बाद में अन्य भाषाओं में अनूदित हुईं। यूरोप में इसके बाद वैदिक और संस्कृत साहित्य की ओर ध्यान गया। मैक्स मूलर जैसे यूरोपीय विद्वान ने भी संस्कृत और वैदिक साहित्य पर बहुत अध्ययन किया है। लेकिन यूरोप के विद्वानों का ध्यान हिन्द आर्य भाषा परिवार के सिद्धांत को बनाने और उसको सिद्ध करने में ही लगा हुआ है। शब्दों की समानता को लेकर बने इस सिद्धांत में ऐतिहासिक तथ्यों और काल निर्धारण को तोड़-मरोड़ करना ही पड़ता है। इस कारण से वेदों की रचना का समय १८००-१००० ईसा पूर्व माना जाता है जो संस्कृत साहित्य और हिन्दू सिद्धांतों पर खरा नहीं उतरता। लेकिन आर्य जातियों के प्रयाण के सिद्धांत के तहत और भाषागत दृष्टि से यही काल इन ग्रंथों की रचना का मान लिया जाता है। वेदों का अवतरण काल वर्तमान सृष्टि के आरंभ के समय का माना जाता है। इसके हिसाब से वेद को अवतरित हुए 2017 (चैत्र शुक्ल प्रतिपदा विक्रमी संवत 2074) को 1,96,08,53,117 वर्ष होंगे। वेद अवतरण के पश्चात् श्रुति के रूप में रहे और काफी बाद में वेदों को लिपिबद्ध किया गया और वेदों को संरक्षित करने अथवा अच्छी तरह से समझने के लिये वेदों से ही वेदांगों का आविष्कार किया गया। इसमें उपस्थित खगोलीय विवरणानुसार कई इतिहासकार इसे ५००० से ७००० साल पुराना मानते हैं परंतु आत्मचिंतन से ज्ञात होता है कि जैसे सात दिन बीत जाने पर पुनः रविवार आता है वैसे ही ये खगोलीय घटनाएं बार बार होतीं हैं अतः इनके आधार पर गणना श्रेयसकर नहीं। वेद हमें ब्रह्मांड के अनोखे, अलौकिक व ब्रह्मांड के अनंत राज बताते हैं जो साधारण समझ से परे हैं। वेद की पुरातन नीतियां व ज्ञान इस दुनिया को न केवल समझाते हैं अपितु इसके अलावा वे इस दुनियां को पुनः सुचारू तरीके से चलाने में मददगार साबित हो सकते हैं।

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

विचार-विमर्श

प्राचीन काल से भारत में वेदों के अध्ययन और व्याख्या की परम्परा रही है। वैदिक सनातन वर्णाश्रम (हिन्दू) धर्म के अनुसार वैदिक काल में ब्रह्मा से लेकर वेदव्यास तथा जैमिनि तक के ऋषि-मुनियों और दार्शनिकों ने शब्द, प्रमाण के रूप में इन्हीं को माना है और इनके आधार पर अपने ग्रन्थों का निर्माण भी किया है। पराशर, कात्यायन, याज्ञवल्क्य, व्यास, पाणिनी आदि को प्राचीन काल के वेदवेत्ता कहते हैं। वेदों के विदित होने यानि चार ऋषियों के ध्यान में आने के बाद इनकी व्याख्या करने की परम्परा रही है [3]। अतः फलस्वरूप एक ही वेद का स्वरुप भी मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् के रुप में चार ही माना गया है। इतिहास (महाभारत), पुराण आदि महान् ग्रन्थ वेदों का व्याख्यान के स्वरूप में रचे गए। प्राचीन काल और मध्ययुग में शास्त्रार्थ इसी व्याख्या और अर्थांतर के कारण हुए हैं। मुख्य विषय - देव, अग्नि, रूद्र, विष्णु, मरुत, सरस्वती इत्यादि जैसे शब्दों को लेकर हुए। वेदवेत्ता महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचार में ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान वेदों के विषय हैं। जीव, ईश्वर, प्रकृति इन तीन अनादि नित्य सत्ताओं का निज स्वरूप का ज्ञान केवल वेद से ही उपलब्ध होता है। वेद में मूर्ति पूजा को अमान्य कहा गया है

कणाद ने "तद्वचनादाम्नायस्य प्राणाण्यम्" और "बुद्धिपूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे" कहकर वेद को दर्शन और विज्ञान का भी स्रोत माना है। हिन्दू धर्म अनुसार सबसे प्राचीन नियम विधाता महर्षि मनु ने कहा वेदोऽखिलो धर्ममूलम् - खिलरहित वेद अर्थात् समग्र संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद के रूप में वेद ही धर्म व धर्मशास्त्र का मूल आधार है। न केवल धार्मिक किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से भी वेदों का असाधारण महत्त्व है। वैदिक युग के आर्यों की संस्कृति और सभ्यता को जानने का वेद ही तो एकमात्र साधन है। मानव-जाति और विशेषतः वैदिकों ने अपने शैशव में धर्म और समाज का किस प्रकार विकास किया इसका ज्ञान केवल वेदों से मिलता है। विश्व के वाङ्मय में इनको प्राचीनतम ग्रन्थ (पुस्तक) माना जाता है। भारतीय भाषाओं का मूलस्वरूप निर्धारित करने में वैदिक भाषा अत्यधिक सहायक सिद्ध हुई है।[3]

यूनेस्को ने ७ नवम्बर २००३ को वेदपाठ को मानवता के मौखिक एवं अमूर्त विरासत की श्रेष्ठ कृतियाँ और मानवता के मौखिक एवं अमूर्त विरासत की श्रेष्ठ कृति घोषित किया।

प्राचीन काल में, भारत में ही, इसकी विवेचना के अंतर के कारण कई मत बन गए थे। मध्ययुग में भी इसके भाष्य (व्याख्या) को लेकर कई शास्त्रार्थ हुए। वैदिक सनातन वर्णाश्रमी इसमें वर्णित चरित्रों देव को पूज्य और मूर्ति रूपक आराध्य समझते हैं जबकि दयानन्द सरस्वती सहित अन्य कईयों का मत है कि इनमें वर्णित चरित्र (जैसे अग्नि, इंद्र आदि) एकमात्र ईश्वर के ही रूप और नाम हैं। इनके अनुसार देवता शब्द का अर्थ है - (उपकार) देने वाली वस्तुएँ, विद्वान लोग और सूक्त मंत्र (और नाम) न कि मूर्ति-पूजनीय आराध्य रूप। वेदों के सर्वांगीण अनुशीलन के लिये शिक्षा (वेदांग), निरुक्त, व्याकरण, छन्द, और कल्प (वेदांग), ज्योतिष के ग्रन्थ हैं जिन्हें **६ अंग** कहते हैं। अंग के विषय इस प्रकार हैं -

1. **शिक्षा** - ध्वनियों का उच्चारण।
2. **निरुक्त** - शब्दों का मूल भाव। इनसे वस्तुओं का ऐसा नाम किस लिये आया इसका विवरण है। शब्द-मूल, शब्दावली, और शब्द निरुक्त के विषय हैं।
3. **व्याकरण** - संधि, समास, उपमा, विभक्ति आदि का विवरण। वाक्य निर्माण को समझने के लिए आवश्यक।
4. **छन्द** - गायन या मंत्रोच्चारण के लिए आघात और लय के लिए निर्देश।

५.**कल्प** - यज्ञ के लिए विधिसूत्र। इसके अन्तर्गत श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र और शुल्बसूत्र |वेदोक्त कार्य सम्पन्न करना और समर्पण करनेमे इनका महत्व है। ६.**ज्योतिष** - समय का ज्ञान और उपयोगिता| आकाशीय पिंडों (सूर्य, पृथ्वी, नक्षत्रों) की गति

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

और स्थिति से । इसमें वेदांगज्योतिष नामक ग्रन्थ प्रत्येक वेदके अलग अलग थे | अब लगधमुनि प्रोक्त चारों वेदों के वेदांगज्योतिषों मे दो ग्रन्थ ही पाए जारे हैं -एक आर्च पाठ और दुसरा याजुस् पाठ | इस ग्रन्थमे सोमाकर नामक विद्वानके प्राचीन भाष्य मीलता है साथ ही कौण्डिन्न्यायन संस्कृत व्याख्या भी मीलता है।

महाभारत काल के बाद संसार में अनेक ज्ञानी व अल्पज्ञानी मनुष्य हुए जिन्होंने समय समय पर देश, काल, परिस्थिति एवं अपनी योग्यतानुसार अनेक मतों का प्रचलन किया। समय के साथ उनके द्वारा चलाये गये मत पल्लवित व पोषित होते रहे और आज अनेक अवैदिक मतों का संसार पर प्रभाव व प्रधानता है। महाभारतकाल के बाद का काल मध्य काल कहा जाता है और वर्तमान काल को आधुनिक काल कहते हैं। महाभारत काल से पूर्व काल को वैदिक काल या प्राचीन काल कहते हैं। महाभारत काल व उससे भी कहीं अधिक प्राचीन चार वेद हैं। वेदों की प्राचीनता से संसार के अधिकांश बुद्धिजीवी परिचित हैं। ऋषि दयानन्द द्वारा संसार में वेदों का जो प्रचार किया गया है, उससे संसार वेदों के महत्व से परिचित हुआ। महाभारत आदि वैदिक ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि महाभारत काल से पहले ऐसा काल रहा है कि जब सारे विश्व में वेदों का प्रचार था और वेद तथा वेदानुकाल शिक्षाओं को ही धर्म मानकर उसका संसार के सभी लोग पालन करते थे। महाभारत युद्ध के बाद वेदों का पठन-पाठन कम होता गया और विश्व की जनसंख्या तेजी से वृद्धि को प्राप्त होती गई। संसार में आवागमन के सुविधाजनक साधन न होने पर भी लोग विश्व के अनेक स्थानों पर आने जाने लगे। भारत भी एक विशाल साम्राज्य न रहकर छोटे छोटे राज्यों में विभक्त हो गया। असंगठित देश व शक्ति का जो परिणाम होता है, वह कालान्तर में भारत में देखने को मिला। वेद की शिक्षाओं का स्थान भारत में अज्ञान व अविद्या के ग्रन्थ 18 पुराणों ने ले लिया। महाभारत के उत्तर काल में रचित इन पुराणों की शिक्षाओं से सत्य सनातन वैदिक धर्म का पतन हुआ। इनके कारण ही वैष्णव, शैव व शाक्त आदि मत अस्तित्व में आये। जिस परिवार व समाज की शासन व अनुशासन व्यवस्था खराब होती है वहां शिक्षा व अध्ययन-अध्यापक, अनुसंधान तथा विद्या की उन्नति की उपयुक्त व्यवस्था नहीं रहती। ऐसा ही कुछ हमारे देश में व्यापक रूप से हुआ।[4]

कालान्तर में वेद के पण्डितों के आलस्य व प्रमाद के कारण वेद विलुप्ति को प्राप्त हो गये और धर्म का स्थान वेद की शिक्षाओं के स्थान पर पुराणों की शिक्षाओं ने लिया। अविद्या के ऐसे ही समय में एकेश्वरवाद के स्थान पर अवतारवाद व बहुदेवतावाद के सिद्धान्त तथा मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध तथा फलित ज्योतिष आदि के व्यवहार प्रचलित हुए। लोग जड़ देवताओं को भी चेतन देवता मानने लगे और आज भी यह अविद्या हिन्दू समाज में व्याप्त है। वायु, जल व अग्नि आदि जड़ देवता हैं परन्तु इनकी भी ईश्वर मानकर पूजा की जाने लगी। देवता उसे कहते हैं जो दिव्य गुणों से युक्त हों। अग्नि, वायु व जल में दिव्य भौतिक गुण होते हैं। इसी कारण यह पदार्थ देवता कहलाते हैं परन्तु जड़ होने से यह उपासना के योग्य नहीं होते। ईश्वर व देवताओं की पूजा की जो विधि हिन्दू मतों में है वह अविवेकपूर्ण लगती है। यह पृथिवी पर खड़े होकर सूर्य को भी जल देते हैं। इन सब लक्षणों को देखकर यही कहा जा सकता है पौराणिक मत के प्रभाव से समाज में विवेक बुद्धि नष्ट हो गई और इस अविद्या के कारण हिन्दू समाज बिखरने के साथ नष्ट भ्रष्ट होता रहा।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में देश में ऋषि दयानन्द जी का आविर्भाव हुआ। वह सत्य व सच्चे ईश्वर की खोज सहित आत्मा के सत्यस्वरूप को जानने के लिए अपने घर को छोड़कर निकले थे। इसके बाद वह अनेक योगियों व ज्ञानियों के सम्पर्क में आये और एक अच्छे योगी व ज्ञानी बने। वह विभिन्न ग्रन्थों के अध्ययन तथा योगदर्शन के अनुसार योगाभ्यास से ईश्वर का साक्षात्कार करके भी सन्तुष्ट नहीं हुए। सन् 1857 में देश में राजनीतिक उथल पुथल हो रही थी। तब भी स्वामी दयानन्द एक उच्च कोटि के विद्या गुरू की खोज कर रहे थे। उन्हें अपने एक गुरु से मथुरा के प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी का पता मिला। स्वामी दयानन्द उनके पास पहुंच जाते हैं। तीन वर्ष तक उनके सान्निध्य में रहकर अध्ययन करते हैं और वेद वेदांगों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। उन्हें सत्य व असत्य ग्रन्थों की कसौटी भी अपने गुरु से प्राप्त होती है। उन्होंने जाना कि जिन धर्म ग्रन्थों में ऋषियों

IJIRSET

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

की आलोचना व निन्दा है वह अनार्ष कोटि के ग्रन्थ हैं। उन ग्रन्थों का त्याग कर देना चाहिये और जिन ग्रन्थों में प्राचीन ऋषियों की प्रशंसा व उनके ज्ञान व विचारों की चर्चा है उनका अध्ययन तर्क व विवेक बुद्धि से करना चाहिये। ऋषि व आप्त पुरुषों के सद्ग्रन्थों की परीक्षा करके उनके वेदानुकूल, तर्क व युक्तियों के अनुकूल होने पर ही उन्हें स्वीकार करना उचित होता है।

अपने गुरु की प्रेरणा से स्वामी दयानन्द जी न, ईश्वर से सृष्टि के आरम्भ में प्राप्त वेद ज्ञान का प्रचार व प्रसार किया। उन्होंने वेद विरुद्ध सभी मतों की आलोचना व समीक्षा कर वेद की शिक्षाओं को सबके लिए ग्राह्य और मत-मतान्तरों की शिक्षाओं को हानिकारक, अनुपयोगी एवं मनुष्य की सांसारिक एवं पारलौकिक उन्नति में बाधक बताया। उन्होंने अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में इसके पक्ष में प्रचुर तर्क व प्रमाण भी दिये हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि सभी मतों में हलचल हुई। सभी ऋषि दयानन्द जी के विरोधी व शत्रु बन गये। सत्य को ग्रहण करने व असत्य को छोड़ने का साहस अपवाद स्वरूप ही किसी में होता है। स्वामी जी द्वारा वेदों का प्रकाश करने पर भी देशवासी अपने-अपने हित-अहित को ध्यान में रखकर अपने मत में ही बने रहे। उन्होंने सत्य मत के ग्रन्थ वेदों को स्वीकार नहीं किया। आज भी यही स्थिति है। ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना कर उसको दस स्वर्णिम दिये जिनमें से चैथा नियम है कि सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। आज यदि सभी मतों पर दृष्टि डाली जाये तो सत्य मान्यताओं से युक्त धर्म व मत की इच्छा रखने व उसे स्वीकार करने वाले ढूंढने पर भी नहीं मिलते। जिस मनुष्य का जहां हित सिद्ध होता होता है, जहां प्रलोभन हों तथा अतिश्योक्तिपूर्ण बातें हों, वहीं सब वेदविद्या हीन लोग जाते हुए दीखते हैं। वर्षों की गुलामी व अविद्या के संस्कारों के कारण मनुष्यों की बुद्धि ऐसी जड़ हो गई है कि वह अपनी बुद्धि से सत्य व असत्य का निर्णय नहीं कर पाते। इस विषय को वह अपने अपने अविद्या से ग्रस्त आचार्यों व धर्म गुरुओं पर छोड़ देते हैं। मत-मतान्तरों के आचार्य अपने चेलों का भावनात्मक व आर्थिक दोहन करते हैं। ऐसे कई धर्म गुरू विगत कुछ समय में कानून की पकड़ में भी आये हैं। लोग यह भूल बैठे हैं कि संसार में ईश्वर केवल और केवल एक है और उसके गुणों व शिक्षाओं का धारण व पालन ही मनुष्यों का धर्म व कर्तव्य है और वह सब मनुष्यों के लिए एक है।[5]

परिणाम

परमपिता परमेश्वर ने जब सृष्टि का निर्माण किया तब सृष्टि में अनेकविध जड़-चेतनों का निर्माण किया। इन नाना विध जड़-चेतनों में यदि कोई सर्वश्रेष्ठ है तो वह है मनुष्य। जैसे परमात्मा ने अपनी सर्वोत्तम कृति मनुष्य को बनाया है ठीक वैसे ही मनुष्यों ने भी अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना के रुप में संसार का निर्माण किया है। इसीलिए मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहा जाता है। मनुष्य ने जिस प्रकार के नियम और व्यवस्था की है उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि उसने पूर्णरुप से परमात्मा की नकल की है क्योंकि परमेश्वर अपने द्वारा निर्मित सृष्टि के नियमों के सदैव अनुकुल रहता है वैसे ही मनुष्य अपने द्वारा निर्मित समाज के नियमों में बंधा हुआ होता है। इस प्रकार हम इसके मूल को खोजे तो हमें ज्ञात होता है कि अनुशासन में इसकी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। परमेश्वर अपने द्वारा निर्मित सृष्टि नियमों के सर्वदानुकुल रहता है। क्योंकि परमेश्वर अपने आपमें अनुशासित होता है। यदि परमेश्वर अनुशासित नहीं होता तो प्रतिदिन प्रलय और निर्माण करता रहता। वह १४ मनवन्तरों के इतने लम्बे समय की प्रतीक्षा नहीं करता। जिस समय जो चाहता वहीं करता। इसी अनुशासन को हम जड़-चेतन दोनों में ही देख सकते हैं। जड़रुपी सूर्य यदि अनुशासन के अन्दर नहीं होता तो वह अपनी इच्छा से निकलता और डूबता, परन्तु ऐसा नहीं है। इसीलिए अनुशासन की नितान्त अनिवार्यता है। इसी कारण अनुशासन के अभाव में अव्यवस्था न फैल जाये । इस प्रकार सोचकर परमपिता परमेश्वर ने सृष्टि के आदि में चार सर्वश्रेष्ठ आत्माओं को वेद का ज्ञान दिया। इस वेद के ज्ञान से सम्पूर्ण प्राणी मात्र अनुशासन सहित अनेक विध ज्ञान-विज्ञान को प्राप्त करे व करावें और धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष को प्राप्त होवे। पशुओं को अपने जन्म के पश्चात् माँ के स्तनपान करना सीखना नहीं पड़ता। पशुओं में जन्म से ही तैरने का गुण विद्यमान होता है। पशुओं की संवेदन शक्ति बहुत तीव्र होती है। इस बात को वैज्ञानिक लोग भी स्वीकार

करते हैं। इसीलिए तो जब कोई मन्त्री या नेता आदि लोग आते हैं उनके सेवक गण गुप्त स्फोटक पदार्थों को ढूढ़ने के लिए मशीन के साथ-साथ कुत्तों को भी लेकर आते हैं। इसप्रकार हम कह सकते है कि पशु जन्म से ही पूर्ण है। वो भोगों को भोगने के लिए इस सृष्टि पर आये हैं न कि कर्म करने के लिए। इसीलिए पशुओं को भोगयोनि की श्रेणी में रखा जाता है। अतः परमेश्वर ने वेदों का ज्ञान प्राणीमात्र के लिए प्रदान किया है। सृष्टि के आदि में परमेश्वर ने चार सर्वश्रेष्ठ आत्माओं को वेद का ज्ञान दिया। ऋग्वेद का ज्ञान अग्नि ऋषि को, यजुर्वेद का ज्ञान वायु ऋषि को, सामवेद का ज्ञान आदित्य ऋषि को, अथर्ववेद का ज्ञान अंगिरा को प्रदान किया। इन्हीं ऋषिओं की परम्परा से वेदों का शुध्द ज्ञान आज हम को प्राप्त हो रहा है। इन चारों वेदों में प्रत्येक विषय का ज्ञान है। पुनरपि मुख्य रुप से ज्ञान, कर्म और उपासना ये तीन वेदों के विषय हैं। माता-पिता जिस प्रकार अपनी सन्तान को कार्य करने के लिए सुख, सुविधा के लिए उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं वैसे ही संसार के लोगों के लिए उस परमेश्वर ने आवश्यक वस्तु वेद को मानव समाज को दिया। इन वेदों में वो सम्पूर्ण सामग्री है जिसे पाकर मनुष्य सुख-शान्ति व समृध्दि को पा कर अत्यन्त परमधाम मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। जब हमारा जन्म होता है तब हमारी माता जी हमें बताती हैं कि अमुक व्यक्ति तुम्हारा भाई हैं, पिता हैं इत्यादि। जितना माता अपने बच्चों से प्यार करती है, उतना और कोई कदापि नहीं कर सकता। वेदों को भी इसीलिए वेदमाता प्रचोदयन्ताम्.....मन्त्र से माता के नाम से सम्बोधित किया जाता है। क्योंकि वेदमाता परमपिता परमेश्वर के विषय में जितना बता सकती है, उतना और दूसरा कोई नहीं बता सकता इसलिए परमपिता परमेश्वर को अच्छी प्रकार से जानने के लिए वेद को जानना और मानना नितान्त अनिवार्य है। मानव समाज के लिए वेद की भूमिका में सबसे महत्वपूर्ण बात है आस्तिक बनना। जब व्यक्ति आस्तिक हो जायेगा तो समाज अत्यधिक उन्नति करेगा। आस्तिकता के आते ही मनुष्य अनुशासित हो जाता है। अनुशासन के अन्तर्गत ही मनुष्य नियम पूर्वक कार्य करने लगता है। आस्तिक होने का सीधा-साफ अर्थ है-परमेश्वर को सर्वव्यापक मानना। इसी से मनुष्य जब भी कोई कार्य करता है तब यही महसुस करता है कि उसे परमेश्वर देख रहा है। परन्तु वर्तमान समय में अनुशासन नहीं हैं, इसका कारण है कि हम आस्तिक नहीं है, वेद को नहीं मानते। (नास्तिको वेद निन्दकः) इसी अनुशासन के आभाव में दुराचार, व्यभिचार, भ्रष्टाचार व्याप्त हो रहा है। इन सब समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए हमें वेद की शरण में जाना पड़ेगा। वेदों की महत्वपूर्ण भूमिका मनुष्य की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में है। प्रत्येक मनुष्य चाहता है कि – मेरा घर परिवार सुखी हो, समृध्दि से भरा हो, पुत्र आज्ञाकारी हो, पत्नी मधुरभाषी हो। इन्हीं बातों को वेद में इसप्रकार व्यक्त किया गया है – अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः। जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवान् ।। [6]

(अथर्व.-३/३°/२) अर्थात् पुत्र पिता का अनुव्रती होवे अर्थात् पिता के व्रतों को पूर्ण करने वाला हो। पुत्र माता के साथ उत्तम मन वाला हो अर्थात् माता के मन को संतुष्ट करने वाला हो। पत्नी पति के साथ मधुर एवं शान्ति युक्त बोले। इसी बात को चाणक्य ने लिखा है कि – यस्य पुत्रो वशीभूतो भार्या छन्दानुगामिनी। विभवे यश्च संतुष्टस्तस्य स्वर्गम् इहैवहि ॥

(चाणक्यनीति) मनुष्य को सुखी रखने के लिए चाणक्य जी कहते हैं कि- ते पुत्रा ये पितुर्भक्ता स पिता यस्तु पोषकः। तन्मित्रं यस्य विश्वासः सा भार्या यत्र निवृत्तिः।। पुत्र वही है जो पिता का भक्त हो और पिता का भक्त हो और पिता वही जो पुत्र का पालन पोषण करता हो, मित्र वही जिस पर विश्वास किया जाये और पत्नी वही है जिससे सुख प्राप्त किया जाए। इस प्रकार वेद तथा ऋषिग्रन्थ यही बताते हैं कि सुखी जीवन के लिए परिवार में परस्पर उत्तरदायित्व तथा सहयोग की भावना बनी रहे। मानव समाज को व्यवस्थित रखने के लिए लोगों के कार्य भी व्यवस्थित होने चाहिए। इसीलिए वेद में कहा गया है- ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद् बाहूः राजन्यः कृतः। उरु तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत् ॥ इस मन्त्र से सिध्द होता है कि सम्पूर्ण संसार के मनुष्यों को कर्म के आधार पर चार भागों में बाँटा गया है। ब्राह्मण: वेद आदि शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन करना-कराना, यज्ञ करना-कराना, दान लेना तथा देना करना कर्मों को करना ब्राह्मणों का परम कर्तव्य है;- अध्यापनमध्यनं यजनं याजनं तथा। दानं प्रतिगृह´चैव ब्रह्मणनामकल्पमत्।। (मनु.-१/८८) क्षत्रिय: प्रजा का रक्षण, दान देना, यज्ञ करना, वेदाध्ययन करना एवं विषयों में आसक्त न होना आदि कर्मों को करना क्षत्रियों का परम कर्तव्य है।। प्रजानां रक्षणं दानमिज्याऽध्ययनमेव च। विषयेष्वप्रशक्ति क्षत्रियस्य समासतः।। (मनु.-१/८९) वैश्य:

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

पशुओं का रक्षण, दान देना, यज्ञ करना, वेदाध्ययन करना, वाणिज्य-व्यापार आदि कर्मों को करना वैश्यों का परम कर्तव्य है। पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च। वाणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च।। (मनु.-१/९०) शुद्रः उपर्युक्त तीनों वर्णों की सेवा शुश्रूषा करना शूद्रों के कर्म हैं। एकमेव तु शुद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्। एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया।। (मनु.-१/९१) इस प्रकार की वर्ण व्यवस्था समाज में होने से सुख-शान्ति का माहौल बना रहता है। मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जो कर्म योनी के अन्तर्गत आता है। मनुष्यों को कार्य करने की स्वतन्त्रता है परन्तु फल भोगने की स्वतन्त्रता नहीं है। जैसे योगेश्वर श्रीकृष्ण जी कहते हैं कि- कर्मण्यवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफल हेतुर्भूमा ते संगोस्त्वकर्मणि।। मनुष्य कर्म करने में सर्वदा स्वतन्त्र है परन्तु फल भोगने में परतन्त्र है। इसीलिए उसे सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म का ज्ञान होना चाहिए क्योंकि इन्हीं कर्मों के अनुसार मनुष्यों को फल मिलता है।

आजकल धर्म व मत के नाम से जो संगठन व संस्थायें चल रहीं हैं वह सब धर्म की परिभाषा सत्याचरण से युक्त नहीं हैं और न ही सत्य को सर्वोपरि महत्व देती हुई दीखती हैं। वस्तुतः धर्म तो सत्य का आचरण करना ही होता है और वह सबके लिए एक ही है। सभी धर्मों व उनकी पुस्तकों पर विचार करते हैं तो वेद के अतिरिक्त सभी एंकागी हैं। इसके अतिरिक्त उनकी अनेक शिक्षायें लिंग समानता पर आधारित न होकर पक्षपातपूर्ण हैं। विज्ञान की कसौटी पर कसने पर भी प्रायः सभी मत ज्ञान व विज्ञान के सिद्धान्तों के विरुद्ध सिद्ध होते हैं। अनेक मतों में काल्पनिक किस्से व कहानियां भी देखने को मिलती हैं। प्रायः सभी मतों में विज्ञान विरोधी बातें पायी जाती हैं। केवल वेद ही एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है जिसकी सभी शिक्षायें व मान्यतायें मनुष्यों के गुण, कर्म व स्वभाव सहित उनकी योग्यता व पात्रता पर आधारित हैं। समानता व न्याय के सिद्धान्त का पालन भी वेदों की मान्यताओं एवं सभी सिद्धान्तों में होता है। सम्पूर्ण सत्य ज्ञान के आकर ग्रन्थ होने से वेद ही ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध होता है। वेद के बाद यदि कोई ग्रन्थ मनुष्यों के लिए सबसे उपयोगी है तो वह सत्यार्थप्रकाश है। उसके बाद उपनिषद, दर्शन, विशुद्ध मनुस्मृति तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि समस्त वेदानुकूल वैदिक साहित्य को रख सकते हैं। अतः वेद व वेदानुकूल सभी ग्रन्थ ही धर्म ग्रन्थ कहला सकते हैं। वेद सब ग्रन्थों व विद्याओं का आदि स्रोत होने के कारण परमधर्म के शीर्ष स्थान पर स्थित है।

निष्कर्ष

अच्छे बुरे कर्मों की पहचान के लिए कहा गया है कि – 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' अर्थात् स्वयं को जो व्यवहार अच्छा न लगे, उसे अन्यों के साथ कदापि नहीं करना चाहिए। हमारी आत्मा सही गलत का सही निर्णायक है। इसीलिए जब अपनी आत्मा को कोई कार्य अच्छा न लगता हो भला वह कार्य दूसरों के लिए कैसे हितकर हो सकता है? ऐसी विचारधारा के होने से हम गलत कार्यों के करने से रुक जायेंगे। मनुष्य का सदाचारी होना बहुत जरुरी है। सदाचारी मनुष्य ही समाज में सुखी रह सकता है और दूसरों को सुख दे सकता है। वर्तमान समाज में सदाचार की नितान्त अनिवार्यता है। इसके लिए वेद हमें उपदेश देते हुए कहता है कि- सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यं हुरो गात्। आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीतो पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ।। (ऋग्वेद-१०/५/६) अर्थात् हिंसा, चोरी, व्यभिचार, मद्यपान, जुआ, असत्य भाषण और इन पापों के करने वालों दुष्टों का सहयोग करने का नाम सप्त मर्यादा है। इनमें से जो एक भी मर्यादा का उल्लंघन करता है अर्थात् एक भी पाप करता है, वह पापी होता है और जो धैर्य से इन हिंसादि पापों को छोड़ देता है, वह निस्संदेह जीवन का स्तम्भ ;आदर्शद्ध होता है और मोक्षभागी होता है। उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जाहि श्वयातुमुत कोकयातुम्। सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र।। (ऋग्वेद-७/१०४/२२) अर्थात् गरुड़ के समान मद (घमंड), गीध के समान लोभ, कोक के समान काम, कुत्ते के समान मत्सर, उलूक के समान मोह (मूर्खता) और भेड़िया के समान क्रोध को मार भगाना अर्थात् काम, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि छह विकारों को अपने अन्तःकरण से हटा दो। आज संसार में सत्यता का अभाव है इसी लिए कहा जाता है कि – 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्.........' सत्य बोलने के साथ-साथ मधुर भाषण होना चाहिए। अतः कहा गहा है कि- जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम्। ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि।।

IJIRSET

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्। वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधु संद्दशः।। (अथर्ववेद-१/३४/२-३) अर्थात् मेरी जिह्वा के अग्रभाग में मधुरता हो और जिह्वा के मूल में मधुरता हो। हे मधुरता! मेरे कर्म में तेरा वास हो और मेरे मन के अन्दर भी तू पहुँच जा। मेरा आना-जाना मधुर हो, मैं स्वयं मधुर मूर्ति बन जाऊँ। हमारी किसी भी इन्द्रिय से अभद्र, असभ्य व्यवहार न होवे इसके लिए वेद बारम्बार आदेश देता है – भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांः सस्तनूभिव्र्यशेमहि देवहितं यदायुः।। (यजुर्वेद-२५/२१) समाज में शराब पीना व जुआ खेलना एक शौक हो गया है। इन कृत्यों से समाज का निरन्तर पतन ही हो रहा है। एतदर्थ इनकी रोकथाम के लिए वेद कहता है कि – हत्सु पीतासे युध्यन्त दुर्मदासो न सुशयाम्। ऊधर्न नग्ना जरन्ते।। अर्थात् दिल खोलकर शराब पीने वाले दुष्ट लोग आपस में लड़ते हैं और नंगे होकर व्यर्थ बड़बड़ाते हैं, इसीलिए शराब कदापि नहीं पीनी चाहिए। जिसप्रकार शराब पीना बुरा है, उसी प्रकार जुआ खेलना भी बुरा है। वेद उपदेश देता है:- जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्वस्वित्। ऋणावा विभ्यध्दनमिच्छमानोऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति।। अर्थात् जुआरी की स्त्री कष्टमय अवस्था के कारण दुःखी रहती है, गली-गली मारे-मारे फिरने वाले जुआरी की माता रोती रहती है, कर्जे से लदा हुआ जुआरी स्वयं सदा डरता रहता है और धन की इच्छा से वह रात के समय दूसरों के घरों में चोरी करने के लिए पहुँचना है, इसलिए जुआ खेलना अत्यन्त बुरा है। इसी प्रकार चोरी को भी बुरा बतलाया गया है। अतः अथर्ववेद में कहा गया है कि- येऽमावास्यां रात्रिमुदस्थुव्र्राजमत्रिणः। अग्निस्तुरीयो यातुहा सो अस्मभ्यमधि ब्रवत्।। अर्थात् जो मुफ्तखोरे, भूखे और भटकने वाले रात्री में बस्ती के भीतर चोरी करने और डाका डालने के लिए आते हैं, उनसे बचने के लिए राजपुरुष सबको सचेत करता है और उन्हें पकड़कर मार डालता है। इसीलिए कभी भी किसी की चोरी नहीं करनी चाहिए। वास्तव में यह सत्य प्रतीत होता है कि हम यदि वेद के द्वारा निर्दिष्ट मार्गों का अनुसरण करने तो निश्चित ही आज समाज में फैली बुराईयाँ समाप्त हो जायेंगी। इसीलिए हम सबको वेदों की प्रासंगिता को समझते हुए 'संगच्छध्वं संवदध्वम्' की भावना से ओत-प्रोत होते हुए वेद के द्वारा दिखाये गये मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। वेदों की श्रेष्ठता के बारे में श्री अटलबिहारी वाजपेयी जी कहते हैं कि- वेद-वेद के मन्त्र मन्त्र में, मन्त्र मन्त्र की पंक्ति-पक्ति में। पंक्ति-पंक्ति के अक्षर स्वर में, दिव्य ज्ञान आलोक प्रदीप्त।। आर्यो! वेदनिधि को पहचान कर स्वयं को वेदानुकुल बनावें और दूसरों को भी वेद मार्ग का अनुसरण करने का उपदेश देवें।[6,7]

वेदों और मत-मतान्तरों के ग्रन्थों में एक बड़ा अन्तर यह है कि वेदों में ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति (कारण व कार्य) का यथार्थ वर्णन उपलब्ध होता है जबकि वेदेतर ग्रन्थों में अनेक प्रकार के भ्रम, संशय व अनिश्चय की स्थिति बनती है। इसी कारण से वेद वर्तमान समय में भी प्रासंगिक हैं। वेदाचरण से मनुष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त होता है। वेदाचरण से मनुष्य अपने इहलोक व परलोक को भी सुधारता हैं। अन्य मत मनुष्य जीवन को सुसंस्कारित बनाने सहित इहलोक को सुधारने का कोई युक्ति संगत ज्ञान नहीं है। परलोक को भी वेदेतर मत प्रायः अपने मत के प्रवर्तक की दया व कृपा पर छोड़ देते हैं या फिर आचार्यों द्वारा अपनी अल्पज्ञता व चातुर्य के कारण कह दिया कि उनके मत पर विश्वास ले आने पर उनके मतानुयायियों के पाप दूर हो जाते हैं जिससे उनकी सदगति व इच्छाओं की पूर्ति होती है। यह सिद्धन्त अविद्या से युक्त है। इसे ज्ञान व तर्क कड़ी कसौटी पर सिद्ध नहीं किया जा सकता। बहुत से मत व उनके अनुयायी पुनर्जन्म के यथार्थ सिद्धान्त को भी नहीं मानते। उनके मत के लोगों की मृत्यु होने पर उनके मत के लोगों की आत्माओं का क्या होता है? वह स्वर्ग व जन्नत की बातें करते हैं जो कि एक प्रकार से पौराणिक कल्पित स्वर्ग जैसा ही लगता है। इन बातों का न तो कोई शास्त्रीय प्रमाण है और न तर्क या बुद्धिसंगत सिद्धान्त ही। तर्क व बुद्धि को तो लगता है कि मत-मतान्तरों ने तिलांजलि दे रखी है। तर्क व युक्ति पर यदि किसी धर्म या मत के सिद्धान्त सत्य सिद्ध होते हैं तो वह केवल वैदिक धर्म व वैदिक मत ही है। एक द्दष्टि सभी मतों की पूजा पद्धतियों पर भी डालनी उचित है। वैदिक धर्म आत्मा से परमात्मा के गुणों का विचार, चिन्तन, उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित जप व कृतज्ञता व्यक्त करने को उसकी पूजा व उपासना मानता है जिसमें वेदों व वेदानुकूल ऋषिकृत ग्रन्थों का स्वाध्याय व उनका आचरण भी सम्मिलित है। अन्य मतों में कुछ लिखी हुई प्रार्थनाओं को याद कर उसे दोहरा देते हैं और कुछ शारीरिक आसन आदि करते हैं। ऐसा करके न तो किसी को ईश्वर प्राप्त होता है और न ईश्वर का साक्षात्कार होने की सम्भावना ही लगती है।

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

योगदर्शन में अष्टांग योग का उल्लेख है। समाधि अष्टांग योग का अन्तिम अंग है। योगदर्शन में समाधि की प्राप्ति के साधन वर्णित हैं। समाधि वह अवस्था होती है जिसमें मनुष्य की आत्मा को ईश्वर का साक्षात्कार होता है। स्वामी दयानन्द व पूर्व के सभी ऋषियों ने समाधि अवस्था को प्राप्त कर स्वयं को ईश्वर के गुण कर्म व स्वभाव के अनुसार बनाया था व मानवता के उपकार के लिये कार्य किये थे। वेदेतर मतों में जीवन व आचरण की शुद्धि व पवित्रता पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता। उनसे केवल अपने मत की सत्यासत्य मान्यताओं का अनुकरण ही कराया जाता है। आज के आधुनिक युग में मत-मतान्तरों की मान्यताओं का परीक्षा तक नहीं की जाती कि क्या वह समग्र रूप में सत्य भी हैं या नहीं। मनुष्य का स्वभाव है कि वह जिस ध्येय का चिन्तन करता है व जिन लोगों की संगति करता है उसके अनुरूप ही वह बन जाता है। सत्य को जानने व उसका पालन करने के प्रति तीव्र भावना, दृण इच्छा विरले मनुष्यों में ही होती है। जो ऐसा करते हुए सत्यज्ञान व आचरण को प्राप्त होते हैं वही वास्तव में धर्मज्ञ व धर्मपुरूष होते हैं।

लेख को विराम देने से पूर्व यह कहना है कि किसी भी ऐसे प्राणी की हत्या जो हमारा हितकारी है, अपकारी नहीं है, एक पाप होता है। उसका मांस खाना उससे भी बड़ा पाप है। पशु की हत्या करने वाले, उसके क्रय विक्रय करने वाले, मांस को पकाने वाले, परोसने व खाने वाले यह अधर्म का कार्य करते हैं। मनुस्मृति में यह बात डंके की चोट पर कही गई है। विदेशियों के सम्पर्क में आकर भारत के आर्य व हिन्दू जाति के कुछ लोग मांसाहार करने लगे। यह उनकी बहुत बड़ी अविद्या है। मानवता में विश्वास रखने वाले मनुष्यों को मांसाहार तुरन्त बन्द कर देना चाहिये अन्यथा जन्म जन्मान्तर में इस पाप कर्म रूपी अपराध का दण्ड भोगना पड़ेगा। हो सकता है कि अनेक बार पशु बन कर उन पशुओं के समान पीड़ित होना पड़े जिनका हमने मांस खाया है। धर्म का अर्थ सभी अच्छे व श्रेष्ठ गुणों को धारण करना है। श्रेष्ठ गुणों का धारण व उनका आचरण ही श्रेष्ठ धर्म है। यह वेद ही सिखाते व बताते हैं। अतः वेद वर्तमान समय में भी प्रासंगिक एवं उपयोगी है। अन्य मतों में असत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों के होने के कारण भले ही वह प्रचलित रहें, इसके अनेक कारण हैं, परन्तु वह प्रासंगिक नहीं हैं। आने वाले समय में उनका प्रभाव धीरे धीरे समाप्त हो सकता है। ईश्वर जब चाहेंगे तभी ऐसा होना सम्भव है। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र और अपने कर्मों के फल भोगने में परतन्त्र है। जो जैसा करेगा वैसा ही भोगेगा। यह वैसा ही है जैसे मनुष्य जो बोता है वही काटता है। संसार के सभी लोग वेदों का अध्ययन करें व ईश्वर प्रदत्त वैदिक धर्म का पालन कर अपने इहलोक व परलोक को सफल बनायें। वेदों का मार्ग मनुष्य को ईश्वर का साक्षात्कार कराता है और अन्य मार्ग उसे आत्मा की मुक्ति व मोक्ष के स्थान पर बन्धनों में फंसा कर जन्म व मरण के दुःखों में बांधते हैं। वैदिक धर्म के समग्र रूप में पालन करने से ही मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह वेद के ऋषियों का सत्य सिद्धान्त है। ओ३म् शम्।[7]

संदर्भ

1. गीता २.५३ - श्रुति विप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला। समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि॥ - यानि (हे अर्जुन) यदि तुम्हारा मन श्रुति में घुसकर भी शांत रहे, समाधि में बुद्धि अविचल रहे तभी तुम्हें सच्चा दिव्य योग मिला है।
2. ↑ आर्यों का आदिदेश
3. ↑ शतपथ ब्राह्मण के अनुसार - 'अग्नेर्वाऋग्वेदो जायते वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः, यानि अग्नि ऋषि से ऋक्, वायु ऋषि से यजुस् और सूर्य ऋषि से सामवेद का ज्ञान मिला। अंगिरस ऋषि को अथर्ववेद का ज्ञान मिला। इससे ब्रह्मा जैसे ऋषियोंने चारो वेदोंकी शिक्षाको स्वयं साक्षात्कार कर अन्य विद्वानों में फैलाया। श्रुतिपरंपरा में वेदग्रहणकालमें ब्रह्मा के चतुर्मुख होने का वर्णन आया है
4. ↑ वैशेषिक दर्शन, प्रथम अध्याय, प्रथम माह्नक, तृतीयश्लोक

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 7, July 2017

5. ↑ ऋगवेद संहिता प्रथम भाग में ख्याति प्राप्त प्रोफेसर मैक्स मूलर लिखते हैं (प्राक्कथन, पृष्ठ १०) कि वे इस बात से आश्वस्त हैं कि ये दुनिया की प्राचीनतम ग्रन्थ (पुस्तक) हैं।
6. ↑ पुस्तक मानवेर आदि जन्मभूमि लेखक श्रीविद्यारत्न जी, पृष्ठ १२४
7. ↑ दयानन्द सरस्वती. सत्यार्थ प्रकाश. पृ° 24-25.